© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

गीतिकाव्यों की परम्परा

मयंक शेखर झा
एस0आर0एफ0
संस्कृत–विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

देववाणी, गीर्वाणवाणी के नाम से अभिहित संस्कृत भाषा विश्व की सभी भाषाओं की जननी है। भारतीय धर्म–दर्शन–पुराण–इतिहास–साहित्य–व्याकरण प्रभृति सभी शास्त्र संस्कृत–भाषा में समुपनिबद्ध हैं, अतः वैदिक–काल से लेकर अद्यपर्यन्त संस्कृत–भाषा में लिखित विविधविषयक ग्रन्थों की क्रमबद्ध श्रृंखला संस्कृत–वाङ्मय की शोभा बढ़ा रही है। सुरभारती की सेवा में तत्पर भारतीय विद्वानों की मनीषा ऐहिक सुख की अपेक्षा पारलौकिक सुख की ओर सतत् प्रवृत्त रही है अतः वे पुरुषार्थ–चतुष्टय में परिगणित अन्तिम पुरुषार्थ अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति को ही ग्रन्थों के प्रणयन का भी मुख्य प्रयोजन मानते थे। साहित्यशास्त्र का भी मूलभूत प्रयोजन 'सद्यः परनिर्वृतिः' अर्थात् परमानन्द की प्राप्ति ही है। सर्वविदित ही है कि संस्कृत के काव्यशास्त्रियों ने काव्य को दो भागों में विभाजित किया है। 1. दृश्यकाव्य, 2. श्रव्यकाव्य।

दृश्यकाव्य के अन्तर्गत रूपक और उपरूपक नामक दो भेद माने जाते हैं तथा श्रव्यकाव्य के अन्तर्गत गद्य, पद्य तथा चम्पू ये तीन भेद स्वीकृत किए गए हैं पुनः गद्यकाव्य के अन्तर्गत कथा (काल्पनिक कथा) आख्यायिका (ऐतिहासिक कथा) नामक दो भेदों की गणना की गई है। पद्य अर्थात् छन्दोबद्ध रचना, इसके भी दो भेद माने गये हैं–1. प्रबन्ध काव्य एवं 2. मुक्तक काव्य। 'पूर्वापरार्थघटनैः प्रबन्धः' अर्थात् पूर्वापर सम्बन्ध–निर्वाहमूलक कथात्मक रचना को प्रबन्ध काव्य कहते हैं। मुक्तक काव्य के पद्य स्वतः पूर्ण होते हैं। जैसा कि ध्वन्यालोककार ने भी कहा है–

'पूर्वापरनिरपेक्षेणापि येन रसचर्वणा क्रियते तदेव मुक्तकम्'।[1]

सर्वप्रथम हम गीतिकाव्य में प्रयुक्त 'गीति' तथा 'काव्य' इन दोनों ही शब्दों की चर्चा करते हैं। गीति किसे कहते हैं? गीति क्या है? आचार्य वाचस्पति गैरोला ने अपनी पुस्तक 'संस्कृत–साहित्य का इतिहास' में लिखा है कि गीति या गीति का अर्थ सामान्यतया गान समझ लिया जाता है, जिसमें साज श्रृंगार गायन–वादन

[1] संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी, पृ0सं0 521

की प्रधानता हो, किन्तु यहाँ गीत या गीति का अर्थ हृदय की रागात्मिका भावना को छन्दोबद्ध रूप में प्रकट करना अभिप्रेत है।[2]

'गै' धातु से 'क्त' प्रत्यय करने पर 'गीत' शब्द तथा 'गै' धातु से 'क्तिन्' प्रत्यय करने पर 'गीति' शब्द निष्पन्न होता है।[3] अतः गीति शब्द का साधारण अर्थ गान ही अभिप्रेत है जैसा कि 'नाट्यशास्त्र' में भी कहा गया है कि–'गीयते इति गीतम्' अर्थात् जो गाया जाये वह गीत है। जिस पद–रचना को सरल स्वर–संयोग के साथ तन्मयतापूर्वक गाया जाता है उसे गीति कहते हैं, अथवा लय और ताल के स्वाभाविक सामंजस्य से उच्छ्वसित भावप्रवण चित्त की रसाप्लावित पवित्र अभिव्यक्तियों की शब्दार्थस्पन्द से युक्त रागमयी क्रीडा 'गीति' कही जाती है।[4]

प्राचीन आचार्यों के द्वारा जो यह कहा गया कि गीतियों की ही साम संज्ञा होती है। उसी से गीतितत्त्व का महत्त्व शिखरारूढ़ सिद्ध होता है, जो (अपनी) लयों मूर्च्छनाओं से देवताओं तक को वशीभूत कर लेने में समर्थ है, वह एकमात्र नृत्य एवं वाद्य से समन्वित गीत (तत्त्व) ही है। स्वेद से जले–भुने बटोही को व्यंजनों (पकवानों) से भी वैसी तृप्ति नहीं प्राप्त होती है, जैसी कि एक गिलास पानी से। ठीक उसी प्रकार सहृदय पाठक को भी (बृहत्कलेवर) महाकाव्य के अनुशीलन से वैसी आनन्दानुभूति नहीं हो पाती जैसी तत्क्षण ही गीतश्रवण से। इसलिए अलंकार, रस, औचित्य, ध्वनि, वक्रोक्ति एवं रीति की चर्चा व्यर्थ है, क्योंकि यह निश्चित है कि गीत ही काव्य की आत्मा है। अलंकारादि सभी तत्त्व काव्य में उसी प्रकार उठते गिरते रहते हैं जैसे महासागर में चंचल लहरें बनती–बिगड़ती रहती है। इसलिए संस्कृत वाङ्मय में आज की कविता में अमन्द–आनन्द सन्दोह का स्रोत होने के कारण गीत–तत्व ही महिमामय सिद्ध होता है।[5]

काव्य के स्वरूप की चर्चा करें तो ग्यारहवीं शताब्दी के ध्वनिप्रतिष्ठापक समन्वयवादी आचार्य मम्मट के अनुसार कवि का कर्म काव्य कहलाता है–

'कवेः कर्म काव्यम्' कवि शब्द 'कवृ वर्णने' धातु से 'रिच्' प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है–

कवते सर्वं जानाति सर्वं वर्णयतीति कविः।[6] कु+अच्+इः।

---

2 संस्कृत साहित्य का इतिहास–आचार्य वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2009, पृ0सं0 768

3 संस्कृत हिन्दी कोश–वामन शिवराम आप्टे, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, 1997, पृ0सं0 345

4 नाट्यशास्त्र, अध्याय 4/297, सम्पादक–रघुवंश, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना, पृ0सं0 163

5 संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र–म0म0 प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 2010, पृ0 391

6 शब्दकल्पद्रुम भाग 2, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, पृ0सं0 68, सन् 1961

कवते श्लोकान् ग्रथते वर्णयतीति वा[7] (कव + इन्)।

संस्कृत–साहित्य के इतिहास में गद्य–काव्य के पश्चात् पद्य–काव्यों का स्थान आता है तथा पद्य–काव्यों में भी महाकाव्यों के पश्चात् ही खण्डकाव्यों अर्थात् गीतिकाव्यों का स्थान आता है। काव्य का वह रूप जो वाद्यों के साथ संगीतात्मक रूप से गाया जाता है, वह गीतिकाव्य कहलाता है। 'गीतिकाव्य' काव्य की वह विधा–विशेष है, जिसमें स्वतः प्रेरित भावावेश की आर्द्र, तरल और निश्छल आत्माभिव्यंजना होती है। 'अभिधानरत्नमाला' में पं0 हलायुधभट्ट ने गीत और गान शब्दों को पर्यायवाची माना है। गीतिकाव्य संस्कृत वाङ्मय की परम रम्य विधा है। गीति की आत्मा भावातिरेक है। कवि अपनी रागात्मक अनुभूति तथा कल्पना के वर्ण्यविषय को भावात्मक बना देता है। स्वगम्य अनुभूति को परगम्य अनुभूति रूप में परिणत करने के लिए कवि जिन मधुर भावापन्न रसान्द्र उक्तियों को माध्यम बनाता है, वह गीतियाँ कहलाती हैं।[8]

निस्सन्देह संस्कृत काव्यशास्त्र की परम्परा अत्यन्त विस्तृत है, लेकिन इस सुदीर्घ परम्परा में गीतिकाव्य को स्वतन्त्र काव्य या पृथक् विधा के रूप में नहीं माना गया। अनेकानेक काव्यशास्त्रीय आचार्यों यथा भामह–दण्डी–रुद्रट– वामन–आनन्दवर्धन–विश्वनाथ–जगन्नाथ आदि आचार्यों ने अपने–अपने काव्यशास्त्रों में काव्य के अनेक भेद गिनाये हैं, परन्तु 'गीतिकाव्य' शब्द का प्रयोग तक नहीं किया। आचार्य विश्वनाथ ने अपने ग्रन्थ में 'गीतिकाव्य' के स्वरूप के विषय में केवल यह उद्धृत किया है कि जिसमें महाकाव्य के समस्त गुण विद्यमान नहीं होते वे खण्डकाव्य कहलाते हैं–

'खण्डकाव्यं भवेत् काव्यस्यैकदेशानुसारि च।[9]

अग्निपुराण में मुक्तक को चमत्कार का आवश्यक अंग बताया गया–

'मुक्तकं श्लोक एवैकश्चमत्कारक्षमः सताम्।[10]

आचार्य आनन्दवर्धन ने मुक्तक में रस–परिपाक को आवश्यक बताया है–

'प्रबन्धे मुक्तके वापि रसादीन् बन्धुमिच्छता।

यत्नः कार्यः सुमतिना परिहारे विरोधिनाम्।।[11]

वैदिक काल से मानव–जीवन में गीतितत्व की प्रधानता रही है। ऋग्वेद में उषा, विष्णु, इन्द्र, वरुण, सविता, अदिति, मरुत् आदि देवताओं की अनेक सूक्तों में स्तुति की गई है। वैदिक–कर्मकाण्डों में उद्गाताओं

---

7 शब्दकल्पद्रुम भाग 2, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, पृ0सं0 68, सन् 1961

8 संस्कृत वाङ्मय का बृहद इतिहास–आचार्य बलदेव उपाध्याय, उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ, पृ0 15

9 कृष्णदास सीरिज–1, साहित्य–दर्पणम् परिच्छेद, पृ0सं0 515

10 अग्निपुराण, 3/12

11 ध्वन्यालोक 3/17, पृ0सं0 212, आचार्य विश्वेश्वर, ज्ञानमण्ड लिमिटेड, लंका, वाराणसी

द्वारा सामवेद के मन्त्र गाये जाते हैं। चारों वेदों में सामवेद गीतिप्रधान है। जैमिनि भी सामवेद में गीति की प्रधानता को निम्नरूप से निरूपित करते हैं–

गीतिषु समाख्या।[12]

भगवान् श्रीकृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता के दशम् अध्याय में स्वयं को सामवेद कहा है–

वेदानां सामवेदोऽस्मि।[13]

आचार्य भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में लिखा है–

'जग्राह पाठ्यमृग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च।

यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि।।[14]

गीति की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए संगीतरत्नाकर में लिखा गया है कि–

सामवेदादिदं गीतं सञ्जग्राह पितामहः।[15]

आदिकवि वाल्मीकि विरचित रामायण में वर्णित गीततत्व को ही अपनी उत्स भूमि सिद्ध करता है। व्याध के बाण से आहत क्रौंची का करुण विलाप वाल्मीकि के हृदय को संवेदित करके सहसा द्रवित करता है, परिणामतः उनके मुख से निम्न पद्य के माध्यम से सहसा सरस्वती प्रवाहित हो उठती है–

मा निषाद! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वती समाः।

यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।[16]

वस्तुतः यह आदिकवि का शोक ही था जो संस्कृत–साहित्य के प्रथम पद्य के रूप में प्रस्फुटित हुआ था, जिसे ध्वन्यालोककार आचार्य आनन्दवर्धन ने निम्न कारिका के माध्यम से समर्थन किया है–

काव्यस्यात्मा स एवार्थस्तथा चादिकवेः पुरा।

क्रौञ्चद्वन्द्वियोगोत्थः शोकः श्लोकत्वमागतः।।[17]

गीतिकाव्य के विकास–श्रृंखला में कविकुलगुरु महाकवि कालिदास का नाम सर्वोपरि है। उन्होंने ऋतुसंहार तथा मेघदूत नामक दो गीतिकाव्य (खण्डकाव्यों) की रचना की। ऋतुसंहार के छह सर्गों में 6 ऋतुओं का वर्णन है। मेघदूत विप्रलम्भ श्रृंगार–रस से आप्लावित तथा मन्दाक्रान्ता छन्द में गुम्फित अत्यन्त हृदयावर्जक कृति है। यह दो भागों में विभक्त है, पूर्वमेघ तथा उत्तरमेघ। इसी क्रम में शतकत्रय के प्रणेता

---

12 सामवेद 3/15

13 गीता 10/22

14 नाट्यशास्त्र 1/17

15 संगीतरत्नाकर, 3/29

16 संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास–डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी, पृ0सं0 111

17 ध्वन्यालोक, 1/5

भर्तृहरि का नाम जगत्–प्रसिद्ध है। इनकी तीन रचनाएँ नीतिशतक, श्रृंगारशतक तथा वैराग्यशतक नाम से संस्कृत–वाङ्मय में उपलब्ध हैं। अमरूक कवि रचित अमरुशतक की भी गीतिकाव्य में अपनी विशिष्ट पहचान है। उनके विषय में ध्वन्यालोककार स्वयं कहते हैं कि उनका एक–एक श्लोक एक–एक प्रबन्ध के बराबर है–

'अमरुकस्य कवेर्मुक्तकाः श्रृंगाररसस्यन्दिनः प्रबन्धायमानाः प्रसिद्धा एव।[18]

12 सर्गों में समुपनिबद्ध जयदेव रचित 'गीतगोविन्दकाव्यम्' गीति की अनुपम छटा समग्र जनमानस के सम्मुख प्रस्तुत करती है। संस्कृत साहित्याकाश के मूर्धन्य काव्यशास्त्री एवं समालोचक पण्डितराज जगन्नाथ ने गीतिकाव्य को चरमोत्कर्ष प्रदान किया। उनकी गंगालहरी, सुधालहरी, भामनीविलास आदि अनेक रचनायें सहृदयों के हृदय को अह्लादित करती है।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि वैदिक काल से लेकर अद्यपर्यन्त अनेकानेक गीतिकाव्यों की रचनायें होती रही हैं, जो संस्कृत साहित्य रूपी सुविशाल वट–वृक्ष को दिनानुदिन परिपुष्ट कर रही है।

*****

[18] ध्वन्यालोक, 3/7, गद्य भाग, पृ0सं0 182, आचार्य विश्वेश्वर, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, लंका, वाराणसी।